राजा हरिश्चंद्र की अमर कथा: जब सत्य की रक्षा के लिए एक सम्राट ने अपना सर्वस्व त्याग दिया

मार्कण्डेय पुराण पर आधारित विस्तृत पौराणिक कथा — सत्य, त्याग, धर्म और कर्तव्य की अद्भुत गाथा



openthemagazine.com

आपकी कहानी का मूल भाव अत्यंत मार्मिक है। इसे अधिक रोचक बनाने के लिए मैंने प्राचीन ग्रंथों का मिलान किया है। एक महत्वपूर्ण बात सामने आई है: हरिश्चंद्र, विश्वामित्र, रानी शैव्या, पुत्र रोहिताश्व, राज्यदान, काशी का श्मशान, सर्पदंश और देवताओं द्वारा पुत्र को पुनर्जीवित किए जाने के प्रसंग मार्कण्डेय पुराण में मिलते हैं। लेकिन शनि देव द्वारा साढ़ेसाती लगाना, स्वयं सर्प बनकर रोहिताश्व को डसना और हरिश्चंद्र द्वारा शनि को श्राप देना—इन घटनाओं का प्रमाण मुझे जाँचे गए प्राचीन पाठों में नहीं मिला। इसलिए इन्हें इस प्रामाणिक पुराण-आधारित संस्करण में शामिल नहीं कर रहा हूँ।



Wisdom Library
+2

रानी को लोकपरंपराओं में तारामती और मार्कण्डेय पुराण के उपलब्ध पाठ में शैव्या कहा गया है। इस कथा में शैव्या (तारामती) नाम इस्तेमाल किया गया है। संवादों को रोचक कथावाचन के लिए नए शब्दों में प्रस्तुत किया गया है; इन्हें ग्रंथ के शब्दशः उद्धरण न समझें।

अध्याय 1 — अयोध्या का वह सम्राट जिसके लिए सत्य ही सबसे बड़ा धर्म था

त्रेतायुग की बात है।

सरयू नदी के पावन तट पर बसी अयोध्या नगरी वैभव, धर्म और समृद्धि से संपन्न थी। ऊँचे-ऊँचे राजप्रासाद, विशाल द्वार, सुगंधित उद्यान और जनजीवन में व्याप्त शांति उसकी शोभा बढ़ाते थे।

उस नगरी के सिंहासन पर विराजमान थे सूर्यवंशी महाराज हरिश्चंद्र।

राजा हरिश्चंद्र केवल अपनी वीरता और सामर्थ्य के लिए प्रसिद्ध नहीं थे। उनकी सबसे बड़ी पहचान थी—सत्य के प्रति अटूट निष्ठा।

उनकी प्रजा विश्वास करती थी कि महाराज के मुख से निकला हुआ वचन कभी असत्य नहीं हो सकता।

राजमहल में उनकी धर्मपत्नी रानी शैव्या और पुत्र रोहिताश्व रहते थे। परिवार में प्रेम था, राज्य में समृद्धि थी और महाराज के जीवन में किसी वस्तु का अभाव नहीं था।

किंतु विधाता ने उनके लिए ऐसी परीक्षा निर्धारित कर रखी थी, जिसकी कल्पना भी साधारण मनुष्य नहीं कर सकता।

जिस राजा के आदेश पर हजारों सैनिक खड़े हो जाते थे, एक दिन वही राजा श्मशान भूमि में दूसरों के अधीन होकर कार्य करने वाला था।

जिस रानी के चरण कभी राजमहल की कोमल भूमि पर पड़ते थे, वही रानी दूसरे के घर में सेवा करने वाली थी।

और जिस पुत्र को माता-पिता ने अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय माना था, उसी के कारण उनके जीवन की सबसे कठोर घड़ी आने वाली थी।

अध्याय 2 — वन में एक पुकार और महर्षि विश्वामित्र का क्रोध

एक दिन महाराज हरिश्चंद्र वन में आखेट के लिए गए।

वन में विचरण करते समय उन्हें अचानक स्त्रियों के रोने और सहायता के लिए पुकारने का स्वर सुनाई दिया।

महाराज तत्काल सतर्क हो उठे।

उन्होंने धनुष सँभाला और उस दिशा में बढ़ते हुए कहा—

हरिश्चंद्र: "मेरे राज्य में कौन ऐसा है जो किसी निर्बल को कष्ट पहुँचाने का साहस कर रहा है? भय मत करो, मैं तुम्हारी रक्षा के लिए आ रहा हूँ!"

उस समय वन में महर्षि विश्वामित्र कठोर तपस्या में लीन थे। इस घटना से उनकी तपस्या में व्यवधान उत्पन्न हुआ और वे राजा से अप्रसन्न हो गए।

महर्षि का तेजस्वी स्वर वन में गूँज उठा।

विश्वामित्र: "राजन! तुमने मेरी साधना में व्यवधान उत्पन्न किया है। क्या यही तुम्हारा धर्म है?"

राजा ने विनम्रतापूर्वक सिर झुकाया।

हरिश्चंद्र: "भगवन्! किसी पीड़ित की रक्षा करना मेरा राजधर्म है। यदि अनजाने में मुझसे अपराध हुआ है, तो मैं क्षमा चाहता हूँ।"

महर्षि ने राजा की ओर गंभीर दृष्टि से देखा।

राजा ने आगे कहा—

"ऋषिवर! मैं आपको संतुष्ट करने के लिए जो कुछ संभव होगा, अर्पित करूँगा।"

तभी महर्षि विश्वामित्र ने ऐसी माँग रख दी जिसने महाराज के संपूर्ण जीवन की दिशा बदल दी।

विश्वामित्र: "यदि तुम अपने वचन के इतने दृढ़ हो, तो अपना समस्त राज्य, धन और राजवैभव मुझे दान में दे दो।"

कुछ क्षण के लिए वन में नीरवता छा गई।

राजा के सामने दो मार्ग थे।

पहला—अपने सिंहासन, संपत्ति और सुखों की रक्षा करना।

दूसरा—दिया हुआ वचन निभाना।

हरिश्चंद्र ने दूसरा मार्ग चुना।

उन्होंने हाथ जोड़कर कहा—

हरिश्चंद्र: "हे महर्षि! राज्य, राजकोष और समस्त वैभव आज से आपके हैं। मैंने जो वचन दिया है, उसका पालन करूँगा।"

यह कहकर उन्होंने अपना सर्वस्व दान कर दिया।

परंतु उनकी परीक्षा अभी आरंभ ही हुई थी।

अध्याय 3 — राज्यदान के बाद दक्षिणा की माँग

राज्य प्राप्त करने के पश्चात् महर्षि विश्वामित्र ने कहा—

विश्वामित्र: "राजन! दान के साथ दक्षिणा भी अपेक्षित है। अब मेरी दक्षिणा प्रदान करो।"

हरिश्चंद्र स्तब्ध रह गए।

उन्होंने समस्त राजकोष, संपत्ति और राज्य पहले ही अर्पित कर दिया था।

अब उनके पास देने के लिए कुछ भी शेष नहीं था।

हरिश्चंद्र: "ऋषिवर! मेरे पास अब कोई धन नहीं है, किंतु मैं आपकी दक्षिणा अवश्य चुकाऊँगा। कृपया मुझे समय प्रदान करें।"

महर्षि ने उन्हें समय दिया।

राजा ने अपने राजसी वस्त्र और वैभव त्याग दिए। रानी शैव्या तथा बालक रोहिताश्व उनके साथ चल पड़े।

तीनों ने उस नगर को छोड़ दिया जहाँ कभी उनकी आज्ञा सर्वोपरि थी।

न कोई रथ।

न कोई सेवक।

न कोई राजसी सुरक्षा।

केवल एक पिता, एक माता और उनका पुत्र।

राजमहल के विशाल द्वार पीछे छूटते गए।

रानी ने एक बार मुड़कर उस महल को देखा जहाँ रोहिताश्व का बचपन बीता था।

मगर उन्होंने पति से लौटने की प्रार्थना नहीं की।

शैव्या: "स्वामी! राजमहल का वैभव चला गया तो क्या हुआ? आपका सत्य अभी हमारे साथ है।"

राजा की आँखें भर आईं।

यही वह क्षण था जब हरिश्चंद्र ने समझा कि सत्य की रक्षा के लिए केवल राजा का साहस ही नहीं, पूरे परिवार का त्याग भी आवश्यक होता है।

अध्याय 4 — काशी की यात्रा और रानी शैव्या का महान त्याग

लंबी यात्रा और अनेक कठिनाइयों के बाद राजा अपनी पत्नी और पुत्र सहित पवित्र काशी पहुँचे।

काशी भगवान शिव की नगरी मानी जाती थी।

परंतु उस पावन नगर में भी हरिश्चंद्र की समस्या समाप्त नहीं हुई।

महर्षि विश्वामित्र ने उन्हें दक्षिणा का वचन स्मरण कराया।

राजा के पास अब भी धन नहीं था।

भूख, थकान और चिंता ने उनके शरीर को दुर्बल कर दिया था।

महाराज मन-ही-मन सोचने लगे—

"यदि मैंने अपनी प्रतिज्ञा पूरी नहीं की, तो जीवनभर जिस सत्य की रक्षा की, वही सत्य मुझसे छूट जाएगा।"

रानी शैव्या अपने पति की पीड़ा समझ रही थीं।

उन्होंने अत्यंत कठिन निर्णय लिया।

शैव्या: "स्वामी! मुझे किसी के घर सेवा के लिए दे दीजिए। उससे जो धन प्राप्त हो, उसे महर्षि की दक्षिणा में अर्पित कर दीजिए।"

राजा काँप उठे।

हरिश्चंद्र: "देवि! तुम मेरी जीवनसंगिनी हो। तुम्हें इस प्रकार दूसरे के अधीन कैसे कर सकता हूँ?"

रानी ने दुखी हृदय से उत्तर दिया—

"स्वामी, मैं आपकी विवशता समझती हूँ। जो वचन आपने धर्म के लिए दिया है, उसकी रक्षा में मैं भी सहभागी बनना चाहती हूँ।"

राजा के लिए यह निर्णय किसी भी युद्ध से अधिक कठिन था।

मार्कण्डेय पुराण के वर्णन में इस प्रसंग पर राजा और रानी की पीड़ा इतनी तीव्र है कि वे मूर्च्छित हो जाते हैं। अंततः एक ब्राह्मण रानी को सेवा के लिए खरीदता है।

बालक रोहिताश्व अपनी माता से अलग होने को तैयार नहीं होता।

वह रोते हुए उनकी ओर दौड़ता है।

रोहिताश्व: "माता! आप जहाँ जाएँगी, मैं भी वहीं जाऊँगा।"

रानी ने अपने पुत्र को हृदय से लगा लिया।

अंततः बालक भी अपनी माता के साथ उसी ब्राह्मण के घर चला गया।

राजा हरिश्चंद्र दूर खड़े यह दृश्य देखते रहे।

जिस पिता ने कभी अपने पुत्र के लिए संसार के सुखों की कामना की थी, आज वही पिता उसे अपने सामने पराधीन जीवन की ओर जाते देख रहा था।

मगर दक्षिणा अभी भी पूर्ण नहीं हुई थी।

अध्याय 5 — जब अयोध्या का सम्राट श्मशान का सेवक बना

महर्षि विश्वामित्र ने शेष दक्षिणा माँगी।

अब राजा के पास बेचने के लिए कोई वस्तु नहीं बची थी।

उनका राज्य जा चुका था।

उनकी पत्नी और पुत्र उनसे अलग हो चुके थे।

अंत में राजा ने स्वयं को बेचने का निर्णय किया।

एक चांडाल उन्हें अपने अधीन कार्य करने के लिए खरीद लेता है।

राजा को श्मशान भूमि में सेवा का कार्य सौंपा जाता है।

यह वही हरिश्चंद्र थे जिनके राजमहल के चारों ओर सुगंधित पुष्प खिलते थे।

अब उनके चारों ओर चिताओं की अग्नि, धुएँ और मृत्यु का वातावरण था।

जहाँ कभी राजदरबार में शंख और मंगलवाद्य बजते थे, वहाँ अब शोकाकुल लोगों का विलाप सुनाई देता था।

श्मशान में उनका कार्य मृतकों के अंतिम संस्कार से जुड़े निर्धारित शुल्क का प्रबंध करना था।

दिन बीतते गए।

रातें बीतती गईं।

राजा का शरीर क्षीण हो गया। बाल जटाओं में परिवर्तित हो गए। राजसी तेज के स्थान पर परिश्रम, धूल और पीड़ा के चिह्न दिखाई देने लगे।

किंतु उनके भीतर सत्य की ज्योति अभी भी जल रही थी।

वह अब किसी राज्य के स्वामी नहीं थे, परंतु अपने वचन के प्रति दृढ़ थे।

उन्हें क्या पता था कि सबसे बड़ी परीक्षा अभी शेष है।

अध्याय 6 — एक सर्पदंश जिसने माता के संसार को उजाड़ दिया

उधर ब्राह्मण के घर रानी शैव्या अपने पुत्र रोहिताश्व के साथ कठिन जीवन व्यतीत कर रही थीं।

जिन हाथों में कभी राजमहल के आभूषण सुशोभित होते थे, वे अब सेवा और परिश्रम में लगे रहते थे।

रानी अपने दुखों को सह लेती थीं, किंतु पुत्र की पीड़ा देखकर उनका हृदय व्याकुल हो उठता था।

एक दिन रोहिताश्व दूसरे बालकों के साथ बाहर गया।

उसी समय उसे एक विषैले सर्प ने डस लिया।

बालक की अवस्था बिगड़ने लगी।

कुछ ही समय में उसका शरीर निश्चल हो गया।

जब रानी को यह समाचार मिला, तो उनके जीवन पर मानो वज्रपात हो गया।

वह दौड़ती हुई अपने पुत्र के पास पहुँचीं।

उन्होंने रोहिताश्व को गोद में उठाया।

शैव्या: "पुत्र! अपनी माता की ओर देखो। तुम्हें क्या हो गया? एक बार आँखें खोल दो!"

लेकिन बालक ने कोई उत्तर नहीं दिया।

रानी ने उसका मुख सहलाया। उसे अपने हृदय से लगाया। बार-बार पुकारा।

उनकी करुण पुकार सुनकर वातावरण शोक से भर गया।

अब तक उन्होंने राज्य खोया था, वैभव खोया था, पति का साथ खोया था।

आज उनका पुत्र भी उनसे बिछुड़ गया।

जिस बालक के लिए उन्होंने इतने कष्ट सहे, वही अब उनके सामने निश्चेष्ट पड़ा था।

मार्कण्डेय पुराण और श्रीमद्देवीभागवत में सर्पदंश तथा रानी के इस गहन शोक का वर्णन मिलता है।



Wisdom Library
+1

रानी ने पुत्र का अंतिम संस्कार करने का निश्चय किया।

वह उसका शरीर लेकर श्मशान की ओर चल पड़ीं।

उन्हें ज्ञात नहीं था कि वहाँ उनका सामना किससे होने वाला है।

अध्याय 7 — श्मशान में पति-पत्नी का हृदयविदारक मिलन

रात का समय था।

श्मशान में चिताओं की अग्नि जल रही थी। चारों ओर गहरा अंधकार और करुण वातावरण था।

रानी शैव्या अपने पुत्र के शरीर को लेकर श्मशान पहुँचीं।

वहाँ एक दुर्बल, जटाधारी सेवक अपना कार्य कर रहा था।

वह कोई और नहीं, महाराज हरिश्चंद्र थे।

किन्तु कठोर परिश्रम और लंबे वियोग ने दोनों का स्वरूप इतना बदल दिया था कि वे एक-दूसरे को तत्काल पहचान नहीं सके।

राजा ने शोकमग्न स्त्री और मृत बालक को देखा।

वे अपने कर्तव्य के अनुसार आगे बढ़े।

तभी रानी का विलाप सुनाई दिया।

शैव्या: "हे पुत्र! तेरे पिता कहाँ हैं? यदि आज वे यहाँ होते तो अपनी संतान की यह दशा देखकर कैसे सह पाते?"

उस आवाज़ में कुछ जाना-पहचाना था।

राजा ठिठक गए।

उनकी दृष्टि बालक के मुख पर पड़ी।

चेहरे की बनावट, केश और शरीर के लक्षण उन्हें किसी अत्यंत प्रिय व्यक्ति की याद दिलाने लगे।

उन्होंने बालक को ध्यान से देखा।

अचानक उनके मुख से निकला—

हरिश्चंद्र: "रोहिताश्व...!"

उनका हृदय काँप उठा।

राजा बालक के समीप बैठ गए।

आँसुओं से भरी आँखों के सामने उनके पुत्र का मुख था।

वह पुत्र, जिसे उन्होंने कितने समय से नहीं देखा था।

राजा ने बालक को अपने वक्ष से लगा लिया।

हरिश्चंद्र: "पुत्र! तुम्हारे बिना मेरा जीवन कितना सूना हो गया था। आज तुम्हें इस अवस्था में देखना ही क्या मेरे भाग्य में शेष था?"

यह सुनकर रानी चौंक पड़ीं।

उन्होंने उस सेवक के मुख की ओर देखा।

उसकी जटाएँ, क्षीण शरीर और मैले वस्त्र राजा के परिचित स्वरूप से बिल्कुल भिन्न थे।

लेकिन उसकी आवाज़...

वह आवाज़ रानी कैसे भूल सकती थीं?

शैव्या: "स्वामी... क्या आप ही महाराज हरिश्चंद्र हैं?"

राजा ने ऊपर देखा।

सामने उनकी पत्नी थीं।

कुछ क्षणों तक दोनों एक-दूसरे को देखते रहे।

एक ओर मृत पुत्र था।

दूसरी ओर लंबे वियोग के बाद हुआ मिलन।

और चारों ओर श्मशान की भयावह नीरवता।

राजा और रानी का हृदय शोक से भर उठा।

यह वह मिलन नहीं था जिसकी कल्पना किसी ने की थी।

दोनों अपने पुत्र के पास बैठकर विलाप करने लगे।

अध्याय 8 — जब मातृत्व, पितृत्व और कर्तव्य आमने-सामने खड़े हो गए

राजा हरिश्चंद्र अब अपने पुत्र की देह के सामने खड़े थे।

एक ओर उनका हृदय था, जो रोहिताश्व को अंतिम बार गोद में लेना चाहता था।

दूसरी ओर वह कर्तव्य था जिसके कारण उन्हें श्मशान में सेवा करनी पड़ रही थी।

लोकप्रचलित नाटकीय कथाओं में इस प्रसंग को श्मशान शुल्क की परीक्षा के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। रानी के पास धन न होने और अपनी साड़ी का भाग देने की कथा भी प्रसिद्ध है।

किन्तु यहाँ एक ग्रंथ-संबंधी अंतर है: मार्कण्डेय पुराण के उपलब्ध वर्णन में श्मशान शुल्क का कार्य अवश्य मिलता है, लेकिन अपने ही पुत्र के संस्कार के लिए रानी की आधी साड़ी कर में लेने वाला दृश्य उसी रूप में स्पष्ट नहीं मिलता। इसलिए इस दृश्य को मूल पुराण का प्रमाणित संवाद बनाकर प्रस्तुत करना उचित नहीं होगा।



Wisdom Library

पुराण-आधारित कथा में राजा और रानी के सामने अब उससे भी अधिक करुण निर्णय उपस्थित होता है।

दोनों अपने पुत्र के वियोग को सहन करने में असमर्थ हो जाते हैं।

वे सोचते हैं कि जिस जीवन में उनका पुत्र ही नहीं रहा, उसके शेष रहने का क्या प्रयोजन है।

शोक में डूबे राजा और रानी अपने पुत्र की चिता के साथ ही जीवन समाप्त करने का विचार करते हैं।

परंतु तभी कथा एक दिव्य मोड़ लेती है।

अध्याय 9 — जब देवताओं के सामने प्रकट हुआ सत्य का तेज

जब राजा और रानी पुत्र के शोक में डूबे हुए थे, उसी समय देवताओं का प्राकट्य हुआ।

देवताओं ने उन्हें रोक लिया।

राजा हरिश्चंद्र को बताया गया कि उनकी सत्यनिष्ठा और धर्म के प्रति दृढ़ता असाधारण है।

वह परीक्षा, जिसमें उन्होंने राज्य, संपत्ति, परिवार और अपना सुख खो दिया था, अब समाप्त होने जा रही थी।

इस अवसर पर धर्म का वास्तविक स्वरूप भी प्रकट हुआ।

राजा को ज्ञात हुआ कि जिस चांडाल के अधीन वे कार्य कर रहे थे, वह स्वयं धर्म का रूप धारण किए हुए था।

यह जानकर हरिश्चंद्र विस्मित रह गए।

इतने कष्टों के बीच भी वे अपने वचन से नहीं हटे थे।

देवताओं की कृपा से रोहिताश्व को पुनः जीवन प्राप्त हुआ।

माता ने जब अपने पुत्र को जीवित देखा, तो उनके आनंद की सीमा न रही।

रानी ने रोहिताश्व को हृदय से लगा लिया।

राजा की आँखों से भी आँसू बहने लगे।

किंतु अब वे शोक के आँसू नहीं थे।

ये उस पिता के आँसू थे जिसने सब कुछ खोने के बाद अपनी संतान को पुनः पा लिया था।

मार्कण्डेय पुराण के आठवें अध्याय में पुत्र के पुनर्जीवन, धर्म के चांडाल-रूप के उद्घाटन और देवताओं के हस्तक्षेप का वर्णन मिलता है।

अध्याय 10 — जब राजा ने स्वर्ग से पहले अपनी प्रजा को चुना

इतने पर भी हरिश्चंद्र की कथा समाप्त नहीं होती।

देवराज इंद्र ने राजा को स्वर्ग जाने के लिए आमंत्रित किया।

एक राजा, जिसने संसार के असहनीय कष्टों का अनुभव किया था, अब दिव्य सुख प्राप्त कर सकता था।

लेकिन हरिश्चंद्र ने एक बार फिर ऐसा निर्णय लिया जिसने उनके चरित्र की महानता सिद्ध कर दी।

उन्होंने अपनी प्रजा को स्मरण किया।

वे लोग, जिन्होंने उनके शासन में जीवन बिताया था।

वे नागरिक, जिनके प्रति राजा का धर्म केवल शासन करना नहीं, बल्कि उनकी रक्षा और कल्याण भी था।

राजा ने अपनी प्रजा को छोड़कर अकेले स्वर्ग जाने की इच्छा प्रकट नहीं की।

हरिश्चंद्र का भाव था कि जिन लोगों के सुख-दुख की जिम्मेदारी उन्होंने जीवनभर उठाई, उन्हें छोड़कर वे अकेले दिव्य लोक का सुख कैसे स्वीकार कर सकते हैं।

देवताओं ने उनके इस भाव को स्वीकार किया।

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार अंततः राजा, उनकी पत्नी और उनकी प्रजा को स्वर्गीय सुख की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार हरिश्चंद्र की कथा केवल सत्य बोलने वाले राजा की कथा नहीं रह जाती।

यह ऐसे राजा की कथा बनती है जिसने स्वयं को अपनी प्रजा से अलग नहीं माना।

अध्याय 11 — राजा हरिश्चंद्र की कथा में छिपे पाँच महान संदेश

सत्य केवल शब्दों का पालन नहीं है। हरिश्चंद्र ने अपने वचन का मूल्य राज्य, संपत्ति और व्यक्तिगत सुख देकर चुकाया। उनके जीवन से प्रतिज्ञा की गंभीरता का संदेश मिलता है।

धर्म की परीक्षा केवल सुख के दिनों में नहीं होती। विपत्ति में भी व्यक्ति अपने आदर्शों के प्रति कितना दृढ़ रहता है, यही उसके चरित्र की वास्तविक कसौटी बनती है।

रानी शैव्या का त्याग भी उतना ही महत्वपूर्ण है। इस कथा को केवल हरिश्चंद्र की महानता के रूप में नहीं देखना चाहिए। रानी ने परिवार, मातृत्व और अपने कर्तव्य के बीच असाधारण कष्ट सहे।

राजा का धर्म प्रजा के कल्याण से जुड़ा है। कथा का अंतिम प्रसंग दिखाता है कि हरिश्चंद्र व्यक्तिगत मुक्ति से पहले अपनी प्रजा को स्मरण करते हैं।

सत्यनिष्ठा का अर्थ संवेदनहीन होना नहीं है। राजा हरिश्चंद्र अपने पुत्र की मृत्यु पर रोते हैं, पत्नी के दुख से विचलित होते हैं और अनेक बार असहाय अनुभव करते हैं। वे भावनाओं से रहित नहीं, बल्कि अत्यंत कठिन परिस्थितियों में भी अपने आदर्शों के प्रति प्रतिबद्ध मनुष्य के रूप में प्रस्तुत होते हैं।

प्राचीन साहित्य और लोककथाओं में क्या अंतर है?

प्रसंग	प्राचीन ग्रंथों में स्थिति
हरिश्चंद्र की सत्यनिष्ठा और विश्वामित्र की परीक्षा	मार्कण्डेय पुराण में वर्णित
समस्त राज्य का दान और दक्षिणा की माँग	मार्कण्डेय पुराण में वर्णित

रानी और पुत्र का दूसरे के अधीन जाना	मार्कण्डेय पुराण में वर्णित
स्वयं को चांडाल के हाथ बेचकर	मार्कण्डेय पुराण में वर्णित
श्मशान में कार्य करना	
रोहिताश्व को सर्पदंश और माता का विलाप	मार्कण्डेय पुराण तथा देवीभागवत में वर्णित
धर्म का चांडाल के रूप में प्रकट होना	मार्कण्डेय पुराण में वर्णित
देवताओं द्वारा पुत्र का पुनर्जीवन	मार्कण्डेय पुराण में वर्णित
शनि देव द्वारा साढ़ेसाती की योजना बनाना	जाँचे गए ग्रंथ-पाठों से पुष्ट नहीं
शनि देव का सर्प बनकर बालक को डसना	जाँचे गए ग्रंथ-पाठों से पुष्ट नहीं
हरिश्चंद्र द्वारा शनि	जाँचे गए ग्रंथ-पाठों से पुष्ट नहीं

देव को
श्राप देना
आधी साड़ी
से श्मशान लोकप्रिय लोक-नाट्य प्रसंग; जाँचे गए पुराण-पाठों से उसी रूप में पुष्ट नहीं
कर चुकाना

TheShani.com के लिए स्रोत-संदर्भ

इस कथा के लिए प्रमुख संदर्भ हैं:

- मार्कण्डेय पुराण — अध्याय 7
- मार्कण्डेय पुराण — अध्याय 8
- श्रीमद्देवीभागवत — सप्तम स्कंध, अध्याय 26
- ऐतरेय ब्राह्मण — वैदिक परंपरा का संदर्भ